इकाई 38 राजनीतिक व्यवस्था की संरचना : सामंतों, महासामंतों, और शासकों तथा अधिकारियों के अन्य वर्ग

इकाई की रूपरेखा

38.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप बता सकते हैं:

- राजनीतिक व्यवस्था या राजनीतिक संगठन का चरित्र,
- मौर्य राजनीतिक व्यवस्था और इस काल की राजनीतिक व्यवस्था के बीच अंतर, और
- उन कारणों को जिनके आधार पर इतिहासकार इस काल के राजनीतिक संगठन का चरित्र सामन्तीय मानते हैं।

38.1 प्रस्तावना

जिस काल का हम अध्ययन कर रहे हैं उस पर उत्तर में गुप्त तथा पुष्यभूतियों, दक्कन में वाकाटक, कदम्ब एवं बादामी के चालुक्य और दक्षिण के आंध्र तथा तमिलनाडु में पल्लवों का शासन रहा। इन सबके अतिरिक्त निश्चित रूप से कुछ छोटे राज्य एवं सरदारों के प्रभाव क्षेत्र देश के बहुत से भागों में विद्यमान थे। इस युग की राजनैतिक व्यवस्था का अध्ययन करने के लिए अभिलेख, धर्मशास्त्र साहित्य, बाण की रचना हर्षचरित, चीनी यात्रियों फाहियान एवं ह्वेन-त्सांग के यात्रा वृतान्त आदि इस काल के मुख्य स्रोत हैं। इस काल की राजनीतिक व्यवस्था के लिए सामान्यतः यह कहा जाता है कि उत्तराधिकारी राजतन्त्रों का छोटे क्षेत्रों पर शासन रहा परन्तु उनमें से एक या दो राजतन्त्रों ने एक व्यापक क्षेत्र पर अपने सम्प्रभु को स्थापित किया। उदाहरण के लिए, गुप्त शासकों के (300 ई. से 500 ई. तक) तथा हर्ष के (सातवीं सदी के पूर्वार्द्ध में) नियन्त्रण में सामान्यतः एक विशाल क्षेत्र था। उनके राजनैतिक इतिहास का विवरण खण्ड 8 में पहले ही किया जा चुका है। इस इकाई में हम 300 ई. से 700 ई. तक के काल के राजनैतिक संगठन की मुख्य विशेषताओं का विवेचन करेंगे। हम यह भी दिखाने का प्रयास करेंगे कि इन विशेषताओं ने पहले के युग के राजनैतिक संगठन में परिवर्तन को कैसे स्पष्ट किया और इसी प्रकार के परिवर्तन अन्य क्षेत्रों में भी हुए जैसे कि इस समय में देश के राजनैतिक संगठन में भी अति महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे।

38.2 राजा

देश के अधिकतर भाग पर राजाओं का ही शासन था। कुछ सीमान्त क्षेत्रों में गणों (कबीलाई गणतन्त्र) की

सरकार कायम थी। चौथी सदी ई. के प्रारम्भ में समुद्रगुप्त के द्वारा उत्तर भारत में सैनिक अभियान का संचालन करने के बाद ये सभी कबीलाई गणतन्त्र राजनैतिक दृश्य से गायब हो गये। इस प्रकार पंजाब में मद्र एवं योधेय, मध्य भारत के आभीर आदि का नाम फिर कभी भी सुनायी न दिया। कुछ कबीलाई सरदारों के राज्य धीरे-धीरे राजतन्त्रों में परिवर्तित हो गये। राजा अब परममहेश्वर, राजाधिरा, परमभट्टारक जैसी भारी भरकम उपाधियों को धारण करने लगे जिनसे अन्य छोटे शासकों पर उनकी सर्वोच्चता स्पष्ट होती है। इस काल में दैवी अधिकार सिद्धान्त का प्रचलन हो गया। इस सिद्धान्त को बनाये रखने के लिये राजा पृथ्वीबल्लभ जैसी उपाधियों को धारण करते थे। जिसका तात्पर्य है, "धरती पर देवताओं का प्यारा"। उसको पांचवा लोकपाल कहा जाता है क्योंकि चारों प्रधान दिशाओं के संरक्षकों पर लोकपालों के नाम से विख्यात अन्य चार थे कुबेर, वरुण, इन्द्र एवं यम। यद्यपि राजा का देवत्व का सिद्धान्त प्रधानता को प्राप्त कर गया था परन्तु इसके अन्दर राज्य की एक संरक्षक तथा रक्षक की अवधारणा भी निहित थी।

अपवाद के रूप में कुछ ऐसी रानियों के नाम भी मिलते हैं जो शासन करती थीं। इनमें वाकाटक रानी प्रभावती का नाम लिया जा सकता है जो गुप्त शासकों से संबंधित थी और बाद में काश्मीर की रानी दिद्दा थी। सामान्यतः रानियां पृष्ठभूमि में ही रहती थीं।

राजा का पद पैतृक था। यद्यपि सिंहासन पर उत्तराधिकार ज्येष्ठत्व के सिद्धान्त के अनुसार ही तय किया जाता था जिसका तात्पर्य है कि सिंहासन पर राजा का ज्येष्ठ पुत्र ही बैठता है परन्तु इस नियम के कुछ अपवाद भी थे। कभी-कभी राजा का निर्वाचन कुलीनों और मन्त्रियों के द्वारा होता था। सरकार का प्रमुख होने के कारण राजा अपने प्रदेश की सभी प्रशासनिक गतिविधियों का निरीक्षण करता था। वह सर्वोच्च न्यायाधीश था और सामान्यतः युद्ध के मैदानों में अपनी सेना का नेतृत्व करता था।

38.3 नौकरशाही

मौर्य काल की तुलना में, इस काल में राजा को सलाह देने के लिये किसी मन्त्रीपरिषद का अस्तित्व था इसके कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं हैं। परन्तु फिर भी कुछ उच्च अधिकारी इस समय में भी थे जिनको मन्त्री कहा जाता था। इसके उच्च अधिकारी थे संधिविग्राहिका, यह विदेशी मामलों, युद्ध एवं शांति का मन्त्री था, महाबालाधिकृत एवं महादण्डनायक ये दोनों सेना के उच्च अधिकारी थे। कभी-कभी एक समय में एक ही व्यक्ति एक से अधिक पदों पर पदासीन होता था। उदाहरण के लिये, हरिषेण जो समुद्रगुप्त की इलाहाबाद प्रशस्ति का रचियता था संधिविग्राहिका होने के साथ-साथ महादण्डनायक भी था।

इनके अतिरिक्त गुप्त सरकार के अन्तर्गत अधिकारियों का एक वर्ग था जिसको कुमारमात्य के नाम से जाना जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकार अधिभारियों की नियुक्ति इस वर्ग से की जाती थी और इसलिए कुमारमात्यों को अन्य बहुत से पदों जैसे कि संधिविग्राहिका, दण्डनायक, महाबालाधिकृत आदि पर भी नियुक्त किया जाता। उनमें कुछ प्रत्यक्ष रूप से राजा के नियन्त्रण में होते थे और उनमें से कुछ राजकुमारों के सेवकों तथा प्रांतीय सूबेदारों के रूप में कार्य करते थे। उपारिका के नाम से पुकारे जाने वाले अधिकारी के अधीन एक प्रशासनिक मण्डल मुक्ति होता था। आयुक्तक नौकरशाही का एक सदस्य था जो विषयपति के समान था तथा गाँव से उच्च स्तर पर कार्य करता था और वह ग्राम तथा मुक्ति के मध्य एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक सम्पर्क था।

इस काल के प्रारम्भ में प्रशासनिक अधिकारियों को भुगतान नकद किया जाता था और बाद में एक निश्चित क्षेत्र का राजस्व वे प्राप्त करने लगे और इसलिए उनको भोमिका और भोगपति कहा जाने लगा। यह हर्षचरित से ज्ञात हुआ है जिसके अनुसार इस प्रकार के अधिकारियों के विरुद्ध गाँव वालों ने हर्ष से शिकायत की। ये पद बाद में पैतृक हो गये जिसके कारणवश राजा का प्रभुत्व कमजोर हो गया।

38.4 सेना

आंतरिक शांति रखने तथा आक्रमण से सुरक्षा के लिए लगातार या स्थायी रूप से सेना रखना इस युग की मुख्य विशेषता थी। जैसा कि ऊपर बताया गया कि उस समय में भी सेना के बहुत से उच्च अधिकारी थे और सेना इन अधिकारियों के अधीन होती थी। घुड़ सेना इस युग की सेना का मुख्य अंग होती थी। समुद्र तटीय पल्लव जैसे दक्षिण के राज्यों में नौसेना भी होती थी। इस युग की सेना में रथों का प्रचलन महत्वपूर्ण नहीं था। केन्द्रीय शाही सेना का उपभाग सामान्तों की सेना होती थी।

38.5 प्रशासनिक विभाजन

देश का प्रशासन सुचारू रूप से चलाने के लिए उसको कई मण्डलों में विभक्त किया गया। सबसे उच्च इकाई को भुक्ति कहा जाता था। कभी-कभी राजकुमार इस पद पर नियुक्त किये जाते थे। भुक्ति से आगे का प्रशासनिक मण्डल विषय होता था और प्रशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम होते थे। कुछ विशेष क्षेत्रों में विषय को राष्ट्र भी कहा जाता था। पूर्वी भारत में विषयों को भी विभिन्न विथियों में विभाजित किया गया था और जो ग्राम से ऊपर होता था। विषय के अधिकारियों को (या स्थानीय ताकतवर लोग) विषपति कहा जाता और वे प्रशासनिक कार्यों में अग्रिम भूमिका अदा करते। गाँव में एक मुखिया होता और गाँव के बड़े-बूढ़े लोग गाँव के मामलों में अग्रिम भूमिका अदा करते थे। नगरों या कस्बों में दस्तकारों तथा व्यापारियों के अपने संगठन (श्रेणियां) होते थे और वे अपने इन संगठनों का प्रशासन स्वयं चलाते थे।

38.6 सामन्त

अर्द्ध रूप से स्वतन्त्र स्थानीय सरदारों को सामन्त कहा जाता और ये सामन्त इस युग की राजनैतिक व्यवस्था की महत्वपूर्ण विशेषता थे। हम पहले ही बता चुके हैं कि समुद्रगुप्त ने बहुत क्षेत्रों को विजयी किया और उनको अपने अधीन कर लिया। इन क्षेत्रों के कुछ ऐसे शासकों को जो गुप्त साम्राज्य की सीमाओं पर स्थित थे राजा का सहायक शासक बना दिया गया था। वे सामन्तीय शासक हो गये जिससे कि वे समय-समय पर राजा को नजराना भेंट करते थे। उनमें से कुछ ने अपनी पुत्रियों का विवाह राजा के साथ उपहार के रूप में भी किया। वे स्वयं राजा के दरबार में उपस्थित होकर उसको प्रसन्न करने के लिए सम्मान व्यक्त करते। इसके बदले में राजा उनके अपने क्षेत्र में उनके शासन करने के अधिकार को मान्यता प्रदान करता और इसके लिये वह उनको राजपत्र भी देता। युद्ध के समय में ये सहायक शासक राजा की सेना में लड़ने के लिये अपने आदमियों को भेजकर उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते। इन सम्मानों तथा कृतज्ञताओं के बदले में सामन्तों को उनके अपने क्षेत्रों में उस प्रशासन को चलाने के लिए छोड़ दिया जाता। वास्तव में गुप्त साम्राज्य के केन्द्रीय भागों के प्रशासन का संचालन राजा के अधिकारियों के द्वारा किया जाता था।

पुजारियों और अधिकारियों को उनके निर्वाह के लिये भूमि-अनुदान दिये गये जिसके कारण विकेन्द्रीकरण विशेषताओं वाली राजनैतिक व्यवस्था का प्रचलन हुआ। सामान्यतः राजा भूमि-अनुदान ही नहीं प्रदान करता था बल्कि इसके साथ-साथ लोगों पर कर लगाने, अपराधियों को दण्ड आदि देने के अधिकारों को भी प्रदान करता। अनुदान में दिये गये क्षेत्रों को राजा की सेनाओं के प्रवेश से भी मुक्त कर दिया जाता। यह स्वाभाविक ही था कि इस प्रकार के अनुदान प्राप्त करने वाले राजा से लगभग स्वतन्त्र हो गये और वे स्वयं ही सामन्त बन गये। इसके फलस्वरूप हम देखते हैं कि सातवीं सदी ई. में इस प्रकार के अधिकारीगण महासामन्त जैसी भारी भरकम उपाधियां धारण करने लगे। एक सामन्त ने पांच शब्दों की एक विशेष उपाधि को धारण किया जिसको पंचमहाशब्द कहा गया। यद्यपि सामन्त तथा महासामन्त उपाधियों को धारण करने से उनकी स्वायत्तता की पुष्टि होती थी। राजनैतिक व्यवस्था में इन सब विशेषताओं के उत्पन्न हो जाने पर कुछ इतिहासकारों ने निष्कर्ष निकाला है कि गुप्त काल से जिस प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था का जन्म हुआ वह सामन्तीय प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करती थी।

38.7 कर प्रणाली

सरकार को अपना अधिकतम राजस्व कर प्रणाली के द्वारा प्राप्त होता था। भाग, भोग आदि नाम से पुकारे जाने वाले भूमि कर ही मुख्य कर थे और सदी दर सदी भूमि कर में वृद्धि होती रही। इस काल में व्यापार तथा वाणिज्य के पतन का कारण व्यापारिक करों की प्रमुखता नहीं पायी जाती। गाँवों के स्थानीय लोगों को घर एवं भोजन उपलब्ध कराके अनुग्रहीत किया जाता था। यह बात विचारणीय है कि जिन स्थानों पर पुजारियों और अधिकारियों को भूमि-अनुदान दिये गये उन स्थानों से सरकार को प्राप्त होने वाले राजस्व में काफी कमी आयी।

38.8 न्याय व्यवस्था

पहले की तुलना में इस समय न्याय व्यवस्था काफी विकसित हो गई थी। इस काल में ही विधि नियमों तथा

संहिताओं का संकलन हुआ और धर्मशास्त्रों में स्पष्ट रूप से वैधानिक मामलों पर लिखा गया।

उस समय में करण, अधकरण, धर्मासन आदि के नाम से अलग-अलग अदालतें थीं। दीवानी तथा फौजदारी मामलों में एक दूसरे से स्पष्ट विभाजन किया गया था। सम्पत्ति तथा उत्तराधिकार से संबंधित कानून स्पष्ट थे। परन्तु न्याय समाज के वर्ण विभाजन पर आधारित था। एक ही समान अपराध के लिये उच्च वर्ण से या उच्च जाति से संबंधित अपराधी को छोटे वर्ण या छोटी जाति से जुड़े अपराधी की अपेक्षा काफी कम दण्ड दिया जाता था। धर्मशास्त्रों में भी यह व्यवस्था की गई थी कि जब भी न्याय किया जाये तो उस समय विभिन्न श्रेणियों तथा जातियों की परम्पराओं और स्थानीय परिपाटियों को ध्यान में रखा जाए।

बोध प्रश्न 1

1) मौर्य राजनैतिक व्यवस्था एवं 300 ई. से 700 ई. तक की राजनैतिक व्यवस्था के बीच मुख्य भिन्नताओं का विवरण दीजिये।

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित कथनों पर चिह्न लगाकर बताइये कौन सा ठीक (√) या गलत (×) है:

   i) सामन्त अपनी स्वयं की सेना को बनाकर रखते थे।

   ii) भुक्ति सबसे छोटा प्रशासनिक विभाजन था।

   iii) इस काल के दौरान राजा भारी भरकम उपाधियों को धारण करते थे।

   iv) पल्लवों के पास नौसेना नहीं थी।

   v) न्याय वर्ण विभाजनों पर आधारित था।

3) राजनीतिक व्यवस्था में सामन्तों के योगदान पर पांच पंक्तियाँ लिखिये।

....

....

....

....

....

38.9 सारांश

उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम 300 ई. से 700 ई. तक की प्रचलित राजनैतिक व्यवस्था की एक स्पष्ट सी रूपरेखा बना सकते हैं। परन्तु इसके बावजूद भी इस काल में भारत के सभी राज्यों में हम एक समान राजनैतिक व्यवस्था को नहीं देखते। परन्तु इन सब में कुछ समान विशेषताएं थीं। प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए राज्य के क्षेत्र का एक स्थायी स्तर पर विभाजन किया जाना एक स्थायी सेना और एक राजस्व व्यवस्था या कर प्रणाली विशेषकर राज्य के केन्द्रीय भाग में लागू थीं। परन्तु जब इसकी तुलना मौर्य राजनैतिक व्यवस्था के साथ की जाती है तो हम देखते हैं कि इस काल में राजा की सरकार अपने सम्पूर्ण क्षेत्र पर उस प्रकार की प्रभावशाली शक्तियाँ तथा नियन्त्रण नहीं रखती थी।

केन्द्रीय भाग से बाहर वाले क्षेत्रों में सामन्त सरदारों के अपने प्रशासनिक नियम थे और वे राजा की शक्तियों को नाम मात्र की मान्यता प्रदान करते थे। परन्तु मौर्य सरकार के पास साम्राज्य के बड़े भाग में प्रत्येक सामाजिक तथा आर्थिक गतिविधियों पर नियन्त्रण करने के लिये काफी बड़ी संख्या में उच्च अधिकारी थे। लेकिन यह गुप्त साम्राज्य और दूसरे समकालीन राज्यों के विषय में सत्य नहीं था और वहाँ पर बहुत सी बातें

राज्य के नियन्त्रण से बाहर थीं। उदाहरण के लिए, मौर्य राज्य के अन्तर्गत दस्तकारी तथा व्यापारिक संगठनों (श्रेणियों) को सरकार के नियन्त्रण में रखा गया था परन्तु गुप्त काल में यह करीब-करीब स्वायत्त रूप से काम करते थे। जो नियम या कानून प्रत्येक श्रेणी से सम्बन्धित थे उनको भी गुप्त काल में मान्यता दी जाती थी। राजतन्त्र की शक्तियों में इस प्रकार के बिखराव ने सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में होने वाले व्यापक परिवर्तनों में काफी महत्वपूर्ण योगदान किया है। इस प्रकार के परिवर्तन सातवीं सदी ई. तथा इसके बाद के समय में होते रहे जिनको प्रो. आर.एस. शर्मा ने ''भारतीय सामन्तवाद'' का नाम दिया। जहाँ तक इस युग का संबंध है उसमें ये नवीन परिवर्तन शुरू हो रहे थे और वे बाद की शताब्दियों में ही निश्चित आकार ग्रहण कर सके।

38.10 शब्दावली

गण : एक कबीलाई गणतन्त्र को गण कहा जाता था जिसका शासन कबीले के सरदार द्वारा चलाया जाता था न कि राजा के द्वारा।

कुमारमात्य : उच्च अधिकारियों के सामान्य वर्ग को कुमारमात्य कहा जाता था।

सन्धिविग्रहिका : विदेशी मामलों, शांति एवं युद्ध का मन्त्री।

दैव्य अधिकार का सिद्धान्त : यह वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार राजा को शासन करने की शक्ति ईश्वर से प्राप्त हुई है।

भुक्ति : उच्चतम प्रशासनिक विभाजन।

सामन्त : सामन्त सरदार।

भाग : भूमि कर।

सामन्तवाद : एक ऐसी सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक व्यवस्था जिसके अन्तर्गत ज़मींदार तथा किसानों के सम्बन्ध भूमि पर आधारित होते हैं और जिसमें ज़मींदार का यह कर्तव्य है कि उसके भूमि क्षेत्र में रहने वाले लोगों की वह सुरक्षा के दायित्व का निर्वाह करे और इसके बदले में ये निवासी गण अपने ज़मींदार की आवश्यक समयों पर सैन्य सेवाओं की पूर्ति करते हैं।

38.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) पढ़िये भाग 38.2 और 38.9 तथा फिर अपना उत्तर दीजिये।

2) i) √ ii) × iii) √ iv) × v) √

3) देखिये भाग 38.6